

रही है I बेदी जी 'वह तोड़ती पथर' कविता में लिखते हैं -

“हर शहर में /मैंने देखा /उसे तोड़ती पथर

किसी निगम के सरकारी अक्षर /लेकिन उसका नाम नहीं है I ”¹⁴

इसी प्रकार की पंक्तियाँ हम निराला जी की कविता 'तोड़ती पथर' में देख सकते हैं I निराला जी भी जनता के पक्षधर हैं, उन्होंने भी लोक कल्याण के लिए कविताओं का सृजन किया I बेदी जी का काव्य किसी एक विचार को लेकर नहीं रचा गया है, अपितु इसमें लोक के हर पक्ष को रखा गया है I साथ ही साथ अंतर्जगत को भी आधार बनाया गया है I

निष्कर्ष : डॉ. हरमहेंद्र सिंह बेदी जी बहुआयामी प्रतिभा के धनी रचनाकार हैं I उन्होंने साहित्य की अनेक विधाओं का सर्जन किया है, इन्होंने हिंदी और पंजाबी में रचनायें की हैं I उन्होंने कविताओं को लिखा ही नहीं अपितु जिया भी है, इसलिए इन्हें समकालीन कविता के हस्ताक्षर माना गया है I बेदी जी लोक-जीवन और आंतरिक जगत के पारखी हैं, जो की इनकी कविताओं में दिखाई पड़ता है I इनकी प्रत्येक कविता अपना स्वतंत्र अस्तित्व रखती है I कहीं इनकी रचनाओं में मनुष्य का बाहरी संघर्ष दिखाई देता है, तो कहीं अपने अस्तित्व के खोज का संघर्ष है I जीवन में एक विचार भी क्रांतिकारी परिवर्तन ला सकता है I बेदी जी की कविताओं का स्पर्श पाते ही पाठक का हृदय उदात्त भावनाओं के प्रकाश से भर जाता है I इनकी कविताओं को पढ़ कर पाठक की चेतना को झकझोर कर बहुत से प्रश्नों को सामने उठाती हैं I और इन्हीं कविताओं के माध्यम से उन समस्याओं का समाधान भी मिलता है I बेदी जी की कविताओं को पढ़ के उज्ज्वल भविष्य की कामना की जा सकती है I इनकी कविताओं को पढ़ने से जीवन रहस्य को समझने का द्वार खुलता है I

संदर्भ :

1. चिंतामणि भाग -1 :आचार्य राम चन्द्र शुक्ल, पृष्ठ स.107, प्रकाशन संस्थान नयी दिल्ली, संस्करण 2023.
2. विकिपीडिया, एक मुक्त ज्ञान कोष से I
3. मौन में व्रत: डॉ. हरमहेंद्र सिंह बेदी, पृष्ठस.12, समृद्ध पब्लिकेशन शाहदरा, दिल्ली, संस्करण 2023 .
4. कविता के नए प्रतिमान: नामवर सिंह, पृष्ठ स.221, राजकमल प्रकाशन, संस्करण 1968.
5. मौन में व्रत: डॉ. हरमहेंद्र सिंह बेदी, पृष्ठस.13, समृद्ध पब्लिकेशन शाहदरा, दिल्ली, संस्करण 2023 .
6. पानी का सपना: डॉ. हरमहेंद्र सिंह बेदी, पृष्ठ स.63, समृद्ध पब्लिकेशन शाहदरा, दिल्ली, संस्करण 2023 .
7. हरमहेंद्र सिंह बेदी रचनावली(खण्ड -2): प्रोफेसर रामसजन पाण्डेय, पृष्ठ स.37, निर्मल पब्लिकेशन, संस्करण 2019
8. लहर लहर कविता : डॉ. हरमहेंद्र सिंह बेदी, पृष्ठ स.20, प्रकाशन इंडिया नेटबुकस, संस्करण 2020.
9. अनुबंध के भोजपत्र : डॉ. हरमहेंद्र सिंह बेदी, पृष्ठ स.47, बोधि प्रकाशन, संस्करण 2021.
10. अनुबंध के भोजपत्र : डॉ. हरमहेंद्र सिंह बेदी, पृष्ठ स.55, बोधि प्रकाशन, संस्करण 2021.
11. मौनमेव्रत: डॉ. हरमहेंद्र सिंह बेदी, पृष्ठस.38, समृद्ध पब्लिकेशन शाहदरा, दिल्ली, संस्करण 2023 .
12. मौनमेव्रत: डॉ. हरमहेंद्र सिंह बेदी, पृष्ठस.37, समृद्ध पब्लिकेशन शाहदरा, दिल्ली संस्करण 2023 .
13. हरमहेंद्र सिंह बेदी रचनावली(खण्ड -2): प्रोफेसर रामसजन पाण्डेय, पृष्ठ स.102 ., निर्मल पब्लिकेशन, संस्करण 2019
14. हरमहेंद्र सिंह बेदी रचनावली(खण्ड -2): प्रोफेसर रामसजन पाण्डेय, पृष्ठ स.106, निर्मल पब्लिकेशन, संस्करण 2019.

दौसा जिले के प्रमुख संत और उनका साहित्य

डॉ. शीतल प्रसाद महेन्द्रा

सह आचार्य

राजस्थान केन्द्रीय विश्वविद्यालय
बाँदरसिंदरी (किशनगढ़) अजमेर

दौसा, कहते हैं यह नाम संस्कृत शब्द "धौ-सा" अर्थात "स्वर्ग जैसा सुंदर" पर रखा गया है। इस बेहद प्राचीन शहर को "देव नगरी" के नाम से भी जाना जाता है। दौसा जयपुर से पूर्व की ओर लगभग 55 किमी दूर नेशनल हाईवे-21 पर स्थित है। दौसा को 7 वीं शताब्दी राजा सोडदेव ने बसाया था उसके बाद इस परंपरा को दलेराय ने आगे बढ़ाया। यह शहर कछवाहा राजवंश का पहला मुख्यालय था इसके पश्चात दलेराय ने आमेर पर आक्रमण कर उसे अपनी राजधानी बनाया। इस शहर से इतिहास और पुरातात्विक महत्व बहुत सारा जुड़ा हुआ है। कई पुराने महलों की खूबसूरती समेटे दौसा पर्यटकों के लिए भी आकर्षण का केन्द्र है। दौसा शहर की चारों दिशाओं एवं एक पहाड़ पर कुल पांच शिवालय हैं—नीलकंठ महादेव (पहाड़ पर), सोमनाथ महादेव, वैजनाथ महादेव, सहजनाथ महादेव, गुप्तिश्वर महादेव। क्षेत्रफल की दृष्टि से दौसा जिला राजस्थान के छोटे जिलों में से एक है। जिले का आकार मोटे तौर पर अर्ध-गोलाकार या सी-आकार का है, जो केंद्र में चौड़ा है और पूर्व और पश्चिम की ओर पतला है। भौतिक रूप से भूभाग का अधिकांश भाग उत्तर-पूर्व से दक्षिण-पश्चिम तक चलने वाली अरावली पहाड़ियों की कई श्रेणियों के साथ समतल है। जिले की पहाड़ियाँ उत्तरी अरावली पर्वतमाला के भाग या शाखाएँ हैं। यह अरावली ही यहाँ संतों के आकर्षण का कारण है इसकी हर कन्दरा में कोई न कोई साधु साधना में लीन है।

दौसा ना सिर्फ अपने राजाओं, संतों बल्कि स्वतंत्रता सेनानियों के लिए भी जाना जाता है। स्वर्गीय टीकाराम पालीवाल और स्वर्गीय राम करण जोशी उन स्वतंत्रता सेनानियों में शामिल हैं, जिन्होंने आजादी की लड़ाई से लेकर राजस्थान राज्य के गठन के लिए रियासतों के एकीकरण में अपना बहुमूल्य योगदान दिया था। स्वतंत्रता के बाद साल 1952 में स्वर्गीय टीकाराम पालीवाल राजस्थान के पहले निर्वाचित मुख्यमंत्री और स्वर्गीय राम करण जोशी प्रदेश के पहले पंचायती राज मंत्री थे।

दौसा जिले से संबंधित प्रमुख संत और उनका साहित्य

जगजीवन दास महाराज- संत श्री जगजीवन दास महाराज का जन्म उत्तर प्रदेश में 1612 ई. के लगभग माना जाता है। इनका जन्म सरहदा गांव जो बाराबंकी के जिले में सरयू नदी के किनारे कोटवा से दो कोस की दूरी पर हुआ था। जानकारी के अनुसार इनका जन्म चन्देल क्षत्रिय परिवार में हुआ था, संत जगजीवन दास बचपन से ही गंभीर स्वभाव के थे। संत समागम और कीर्तन-कार्यक्रम में वे बड़े उत्साह से हिस्सा लेते थे। जगजीवन दास जी महाराज संवत् 1640 में दौसा आए थे। वहीं संवत् 1647 में संत श्री दाद दयाल महाराज दौसा में आए थे। जगजीवन दास महाराज ने संत श्री दाद दयाल महाराज को गुरु बनाया और बैराठ आमेर में दीक्षा प्राप्त की। दाद दयाल के 152 शिष्य थे जिनमें 100 गृहस्थ थे और 52 साधु थे। जो दाद पंथ के 52 स्तम्भ कहलाए। इनके प्रमुख शिष्य जगजीवन दास महाराज माने जाते हैं।

मंहत केशव देव स्वामी के अनुसार संत श्री जगजीवन दास महाराज दौसा में 40 वर्ष तपस्या की और उसके बाद में संवत् 1694

समाधि ली थी। इसलिए दौसा के टहलड़ी में संत श्री जगजीवन दास जी महाराज की तपोस्थली व समाधि दोनों ही हैं। तपोस्थली का निर्माण जयपुर के महाराजा मानसिंह प्रथम के समकालीन किया गया। श्री जगजीवन को अपने ब्रह्मलीन होने का समय पहले ही ज्ञात हो गया था। उन्होंने अपने साधक शिष्यों को कहा कि उनके शरीर को गुरु दाद के चरण पादुकाओं के पास भैराणे की पहाड़ी की जड़ में रख देना। आज भी दौसा टहलड़ी दाद पंथ के संतों की तप स्थली माना जाता है। गुरु पूर्णिमा के दिन यहां पर दाद पंथ के शिष्य आते हैं और अपने गुरु जी को सौंदर्य नमन करते हैं।

संत सुन्दरदासजी -राजस्थानी सन्त एवं भक्ति काव्य परम्परा में राजस्थान के दौसा क्षेत्र में वि.सं. 1653 को जन्में खण्डेलवाल महाजन कुल के सुन्दरदास का विशिष्ट महत्त्व है। ये सन्त काव्य परम्परा को विकसित करने वालों में अपनी विशेष पहचान रखते हैं। सन्त दाददयाल जी ने इन्हें अपना चैला बना लिया था। इन्होंने दौसा से बाद में काशी तक का भ्रमण किया और अन्त में जयपुर के निकट सांगानेर में वि.सं. 1746 में इनका देहावसान हुआ। सुन्दरदासजी की रचनाओं का संग्रह सुन्दर ग्रन्थावली के नाम से जयपुर के प्रसिद्ध विद्वान श्री हरिनारायण पुरोहित के द्वारा किया गया। इनके ग्रंथों की संख्या 42 है। इनकी महानता के विषय में प्रसिद्ध पद है-

दाद दीनदयाल के, चले दोर पचास।

कोई उड़ुगण कई इन्दु हैं, दिनकर सुन्दरदास।।

सन्तकाव्य परम्परा के अनुकूल ही इन्होंने गुरु महिमा व गुरु की सत्ता को सर्वोपरि माना है। निर्गुणी कवि होते हुए भी काव्य सहज व सरल, जनभाषी काव्य कला पर आधारित है। गुरु का महत्त्व प्रकट करते हुए इन्होंने लिखा है-

गुरु-बिन ज्ञान नहीं, गुरु बिन ध्यान नहीं,

गुरु-बिन आत्मविचार न लहतु है।

गुरु बिन प्रेम नहीं, गुरु बिन नेम नहिं,

गुरु बिन सीलहू, सन्तोष न गहतु है।

गुरु बिन प्यास नहिं, बुद्धि को प्रकाश नहिं,

भ्रमहू को नास नहिं, ससेइ रहतु है।

गुरु बिन बाट नहिं, कौड़ी बिन हाट नहिं

सुन्दर प्रकट लोक, वेद यो कहतु है।

सन्तकाव्य परम्परा को विकसित करने वाले राजस्थानी सन्तों में शिरोमणि-सुन्दरदास ने गुरु महिमा के अतिरिक्त-ज्ञानोपदेश, काल की विकरालता देह व जगत की नसवरता, आसक्ति-तृष्णा, गुरु विश्वास, देह की पवित्रता, वाणी का महत्त्व तथा भजनों का महत्त्व प्रकट करने वाले पदों की रचना की। इनके इन भावों की अभिव्यक्ति से सन्त साहित्य को प्रबलता मिली।

संत श्री दुर्बलनाथ महाराज-सामदा गद्दी के श्री गरीब नाथ जी के शिष्य संत श्री दुर्बल नाथ जी हुए हैं। सन् 1861 में जलझलनी एकादसी को नाथ कवि सन्त श्री दुर्बलनाथ का जन्म बिचगांव (अलैवर) में हुआ। आपके पिता का नाम श्री फत्तूराम मल्होत्रा एवं माता का नाम श्रीमती रूपा देवी है। इन्होंने लगभग बारह वर्ष जमुवारामगढ़, गोपालगढ़, कलजपुरी एवं थली आदि स्थानों पर तपस्या कर बांदाकुई जिला दौसा में समाधी ली।

इनके साहित्य में लोक-जीवन की सूक्ष्म संवेदनाओं, जटिलताओं और विसंगतियों को समूचे सन्दर्भ के साथ सशक्त अभिव्यक्ति मिलती है। इन्होंने जहाँ, लोक जीवन से जुड़े हेली, बन्दड़ा, चुन्दरिया, मंगला आदि से अपने साहित्य को समृद्ध किया है, जो कि संगीतात्मकता में विशिष्ट है। वहीं चैतावनी व सबदों के माध्यम से आम जन को चेताने

का प्रयास किया है-

ले ले रे भलाई एक दिन चलना है जरूर।

तू कहता है मेरा मेरा यहाँ नहीं है कोई तेरा।

भाई बन्धु और कुटुम्ब कबिला, सब हो जावेंगे दूर।।

तू जानत है काया मेरी, यह काया तेरी ना मेरी।

या कारण काया मल-मल धोई अन्त धूर की धूर।।

सन्त श्री दुर्बलनाथ ने गुरु की महिमा के बखान, बह्याडम्बर के विरोध तथा साधकों के लिए अच्छे आचरण की आवश्यकता पर बल दिया। सामाजिक सजगता के कारण हिन्दु-मुस्लिम समुदायों में साम्प्रदायिक सौहार्द बढ़ाने का प्रयास भी किया-

आत्म पति सब ही के कहिये, हिन्दु मुसलमान जी।

आत्म की खबर नहीं है, जोड़ जोड़ कथ गाता जी।।

यही वजह है कि इनके साहित्य में दरगाह, महजत किला आदि का स्पष्ट प्रभाव दिखायी पड़ता है। मेवात क्षेत्र जो कि इनकी जन्मस्थली एवं कर्मस्थली रहा, इन पर मुस्लिम सम्प्रदाय का खासा प्रभाव है। अतः इन्होंने हिन्दु मुस्लिम समन्वय का भी भरपूर प्रयास किया है।

गुरु चैला संवाद के माध्यम से सरल भाषा में आम आदमी को मोक्ष प्राप्ति का सहज रास्ता बतलाया गया है। इनके साहित्य में साधक एवं गृहस्थ सबको अपनी-अपनी भाषा में अपने-अपने तरीकों से समझाने के लिए सबदों के विभिन्न रूप मिलते हैं, जैसे गणपति वन्दना, गुरु महिमा, चैतावनी, वाणी, हँसा, हेली, दरगाह, महजत, बन्दड़ा, मंगला, कलाली, चुन्दरिया आदि।

संत श्री दुर्बलनाथ जी की विद्यालयी शिक्षा नहीं हुयी थी। वे लोक से जुड़े हुये थे, इनके भजनों में त्योहारों का, रहनसहन का, पहनावे का चित्रण एवं आम शब्दों का प्रयोग बहुतयात में मिलता है। प्रचलित प्रथाओं, व्यवस्थाओं एवं सामाजिक दायित्वों के प्रति अपनी सजगता उनके सामाजिक पारखीपन को प्रस्तुत करता है। सन्त दुर्बलनाथ की लोक दृष्टि बहुत व्यापक और उदार है। किसी भी भेद-भावना को वहाँ स्थान नहीं है। हिन्दु - मुस्लिम, ब्राह्मण और सभी वर्ग वहाँ समान हैं। लोक जीवन की धूप-छाव में विचरण करने वाले संत श्री दुर्बलनाथ ने दुनियाँ के लोकाचारों की चर्चा की है। सामाजिक चिन्तन द्वारा जाति व्यवस्था असमानता छुआछूत, धर्म, जातिवाद पर प्रखर चोट की है। सामाजिक रूढ़ियों, विश्वास व परम्परा पर उनके विचार तथा वाणियों में साहित्य में दलित, मजदूर वर्ग पर भी विचार किया है। वे कर्म करने की प्रेरणा देते हैं-

संत भला गुरु नाम रटे, विप्र भला तिहुं वेद पड़े।

राज भला प्रजा सुख पावत, शूर भला रण खेत लड़े।।

वैश्य भला सत व्यापार करे, तौल भला सांचे धड़े।

‘दुर्बल’ भला निज हो मन, पानी भला अपने ही घड़े।।

सामाजिक चिन्तन में उन्होंने नारी की शक्ति का महत्त्व भी स्थापित किया है। इसमें स्पष्ट परिलक्षित होता है कि उनका लोक जीवन से सीधा सार्थक जुड़ाव था। सिद्ध नाथों के समान आपने जन्म आधारित जाति व्यवस्था को समाज के विकास में सबसे बड़ी बाधा माना है। उन्होंने कर्माधारित जाति व्यवस्था की वकालत की है तथा ब्राह्मण, वैश्य, क्षत्रिय एवं शूद्र सभी को उनकी जिम्मेदारी का भान कराया है। इन्होंने समानता का शंखनाद करते हुए सभी को **‘साईं का जीव’** घोषित किया है। मानवीय अस्तित्व की मूल चेतना में ही विद्रोह के स्फुल्लिंग होते हैं। समाज में निरन्तर बढ़ते भेदभाव, धार्मिक संकीर्णता, सामाजिक असमानता, भौतिकवादी प्रवृत्ति तथा कृत्रिम आरोपित मूल्यों के नीचे कसमसाते विशुद्ध मानव की खोज ही संत की प्रेरणा बनी।

संत श्री दुर्बलनाथ जी रचित “अनुभव आत्म प्रकाश” साधु समाज की ही नहीं वरन् हिन्दी निर्गुण साहित्य की भी अमूल्य निधि है। उनके विचारों को स्पष्ट करती यह वाणी-

गुरुजी मैंने अवगुण बहुत करे, मेरे अवगुण माफ करो॥

पाप की पोट धरी सिर ऊपर, पाप के पहाड़ परे।

जितने पांव धरे धरती पर, उतने ही जीव मरे॥

झंठी बात बसे घट भीतर, पर निन्दा ध्यान धरे।

पर तिरिया पर नीयत चलाई, पर धन बहुत हरे॥

दया धर्म नहीं घट के भीतर, जीव पै घात करे।

शील चुन्दरिया ओढ़ी सिरपे, दया की धीर धरे॥

मोह-मनी के शीश उतारे, धीरज धीर धरे।

इत उत के चित छोड़ दे मनवा, गरीबी ज्ञान करे॥

अशुभ कर्म भ्रम को मारो, आधीनी बास करे।

अपने सायब से प्रीत लगाओ, समता से सत्य करे॥

नाम बाण जब दिया गुरु ने, पापों के नाश करे।

इस तद के चित छोड़ से मनवा, गरीबी ज्ञान करे॥

अक्रम कर्म भ्रम को भरो, आधीनी बास करे।

अपने सायब से प्रीत लगावो, समता से सत्य करे॥

नाम बाण जब दिया गुरु ने, पाप अक्रम नाश करे।

“दुर्बलनाथ” शरण संतगुरु की, सत ही पार करे॥

आपने अपने गुरु जी के पास आपने पूर्ण मनोयोग से शिक्षा ग्रहण की जब श्री गरीबनाथ जी को लगा कि ‘दुर्बलनाथ’ योग विद्या में पूर्ण हो गया, तो उन्होंने आपको अपना उत्तराधिकारी बनाना चाहा, इस पर आपने विनम्रतापूर्वक उनके प्रस्ताव के बजाय सब जगह घूम-घूम कर समाज को एक दिशा देने का अपना अनुरोधात्मक विचार अपने गुरु जी के समक्ष रखा। इस पर आपके गुरु जी ने आपकी इच्छा का मान रखते हुये यही करने के लिए आशीर्वाद दिया। इसके उपरान्त आप जगह-जगह सत्संग करते हुए लोक जन को सदोपदेश के सहारे सही मार्ग पर लाते रहे। परम तत्त्व की गूढ़ रहस्यावलियों को सरलता से सबको समझाते हुये आम जन का मार्ग प्रशस्त किया। इस दौरान आपने लगभग बारह वर्ष तक जमुआ रामगढ़, कलजपुरी में एकान्त साधना की। अपनी साधना व तप के बल पर ही आपने अपने जीवन में अनेक चमत्कारिक कार्य किये जिनमें जीवनदान, भगवत् दर्शन आदि मुख्य हैं। अपने यौगिक जीवन में आपने लगभग 1396 शब्दों व वाणियों की रचना की जो कि विभिन्न स्थानों पर सम्पूर्ण उत्तर भारत में उपलब्ध हुई है। अपने अन्तिम समय में आपने बाँदीकुई (दौसा) में अपना आश्रम बनाया। यहीं आश्रम पर 6 माह पूर्व देह त्याग की घोषणा कर दी थी उसी के अनुसार संवत् 1986 तदर्थ सन 1929 को प्राणायाम के अभ्यास से समाधिस्थ होकर ब्रह्मलीन हो गए।

आप इस संसार में 68 वर्ष रहे जिसमें 39 वर्ष वैराग्य जीवन में मानव मात्र को मोक्ष का मार्ग दर्शाते हुए उपदेश देते रहे। आपकी शिष्य परम्परा अग्रानुसार है-

1. श्री शीतल नाथ
2. श्री राधाबाई
3. श्री आधीननाथ
4. श्री बिच्छूनाथ
5. श्री दया नाथ (रामसुखा भाट)

श्री शीतल नाथ महाराज:-बागोरिया परिवार बाँदीकुई (दौसा) राजस्थान के रहने वाले थे। आप अपना गृहस्थ आश्रम का परित्याग कर महाराज के साथ रहकर महाराज की सेवा करते थे एवं प्रिय गायों को चराते थे। महाराज श्री दुर्बलनाथजी ने ही अपने कर कमलों से ही जमुवा रामगढ़ बन्ध घाटी (गोपालगढ़) में महाराज शीतलनाथजी को समाधि दी।

श्री राधाबाई:- राधाबाई ग्राम खवा, तहसील- जमवारामगढ़, (जयपुर) की पहाडिया परिवार से थी एवं थली के पास कलजपुरी (जमवारामगढ़) (जयपुर) में नावरिया परिवार में शादी हुई थी। बचपन में ही विधवा होने के कारण महाराज दुर्बलनाथजी की शरण में आकर अपने आपको सत पुरुष की खोज में अर्पण कर दिया। महाराज के साथ रहकर अपने गुरु की सेवा करती एवं यौगिक रीति के मतानुसार तपस्या करती थी। राधाबाई ने भी अपने आत्मबल तपस्या एवं अनुभव के आधार पर वाणियों की रचना की। राधा बाई अन्त समय तक गुरु महाराज की सेवा करती हुई परमधाम सिधार गई। गुरु महाराज ने ही अपने कर कमलों से राधाबाई को कलजपुरी (थली) के पास डगोता खान के बीहड़ जंगलों में अपनी कुटी के पास समाधि दी।

श्री आधीननाथ:- महाराज जी आधीननाथ से मथुरा निवासी थे। माता पिता ने महाराज आधीननाथ जी को 10 वर्ष की अल्प आयु में ही श्री दुर्बलनाथ के चरणों में समर्पण कर दिया था। इस तरह महाराज आधीननाथजी ने अपनी पाँचों इन्द्रियों पर विजय प्राप्त करके गुरु के बताये हुए पद चिन्हों पर चलते हुए अपना यौगिक जीवन परिपूर्ण किया। जब श्री दुर्बलनाथ ने देखा कि आधीननाथ जी अपने आप में परिपूर्ण हो गया है तो उनको ग्राम थली (जमवारामगढ़)जयपुर के आश्रम की देख रेख का कार्य भार दिया। वहां पर आज भी गुरुद्वारा मंदिर है। महाराज आधीननाथजी जीवन भर देश के कौने कौने में घूम कर गुरु जी के उपदेशों का प्रचार किया करते रहे।

श्री बिच्छू नाथ :- श्री दुर्बलनाथ जी ने बाँदीकुई में समाधि लेने से पूर्व ही भक्तजनों के सम्मुख कहा था कि बाँदीकुई आश्रम का संचालन मैं समाधि लेने के पश्चात वैराग्य पंथ से महात्मा स्वयं आकर करेगा। इस भविष्यवाणी के अनुरूप ठीक कुछ माह पश्चात वैराग्य पंथ से महाराज रामदास जी निवासी लुणावा (फालना) पाली ने स्वयं आकर गुरु महाराज की समाधि के चरण स्पर्श कर मन ही मन महाराज दुर्बलनाथजी को अपना गुरु मान कर सेवा करना प्रारम्भ कर दी। कुछ समय पश्चात महाराज के गुरुभाई गोपालनाथ जी (श्यामदा) अलवर द्वारा इनको चोला देकर बाँदीकुई आश्रम के संचालन का अधिकार दिया एवं नाम श्री बिच्छूनाथ रखा। उसी समय से महाराज रामदास जी श्री बिच्छूनाथजी महाराज के नाम से प्रसिद्ध हुए महाराज बिच्छूनाथजी अपने तपोबल एवं आत्म शक्ति द्वारा महाराज की उपासना करते हुए इतने परिपूर्ण एवं सिद्ध पुरुष हो गये थे कि दर दर से हजारों दीन दुखी अपने दुःखों के निवारण हेतु मंदिर पर पधारने लगे।

आप अपने भक्तजनों को कष्ट के समय स्वयं दर्शन देकर उनके कष्टों का निवारण करते थे। पिनांग के श्री बंशीरामजी बसवाला एवं बिगोता के चतराम जी बडगुजर इसके प्रमाण हैं। आप अपने समय के संस्कृत व ज्योतिष के प्रकाण्ड विद्यान थे। सन 1954 में मन्दिर की परीधि में ही महाराज के चरणों में समाधि ग्रहण की।

महाराज बिच्छूनाथजी के पश्चात श्री दुर्बलनाथजी आश्रम बाँदीकुई का संचालन महाराज गुलाब नाथ जी, महाराज रामनाथजी एवं बालकनाथ जी, महाराज पूर्णनाथजी, महाराज रेवडनाथ जी, महाराज चेतन नाथ जी एवं देवनाथ जी महाराज ने सुचारू रूप से किया अब मंगलनाथ महाराज कर रहे हैं।

श्री शंकर नाथ महाराज- शंकरनाथ जी महाराज का जन्म स्थल गीजगढ़ जिला दौसा है इनके गुरुजी का नाम जोधानाथ जी था परन्तु इन्होंने अपना ज्ञान गुरु श्री दुर्बलनाथ जी को माना उनके भजनों में लगी छाप से यह स्पष्ट होता है यद्यपि शंकरनाथ जी श्री दुर्बलनाथ जी के समकालीन नहीं थे। आप नाथ संप्रदाय में दीक्षा लेकर अनेक स्थानों पर तपस्या करते रहे। बहुत समय आप गोविन्दगढ़ (अलवर) में

करते रहे इसी समय आपने श्री दुर्बलनाथ जी महाराज की वाणियों के संकलन एवं परिभाषित करने का श्रम साध्य कार्य किया। उसके बाद आप ने पांच पौधा नारायणी माता में अपना स्थान बना लिया, वैशाख कृष्ण दशमी संवत् 2050 को देवलोकगमन तक वहीं तपस्या करते रहे।

श्री देवनाथ महाराज- आपके पिता का नाम श्री कल्याण मल महेंदवारिया एवं माता का नाम श्रीमती धापा देवी है आपका जन्म स्थान जयपुर है जबकि बालपन एवं बाद का समय दौसा में व्यतीत हुआ। आपके गुरु का नाम श्री बिच्छू नाथ जी महाराज है। आपने गृहस्थ आश्रम का पालन करते हुए सेवा की इसके उपरांत 19 वर्ष वैराग्य में रहकर गुरु वचन के अनुसार मानव मात्र को योग साधना से जीवन को सहज बनाने का संदेश दिया। इनके शिष्य निम्नानुसार है - 1. श्री लीला नाथ जी महाराज, 2. श्री दया नाथ जी महाराज 3. श्री मंगल नाथ जी महाराज 4. श्री जय नाथ जी महाराज 5. श्री मिठ्ठन नाथ जी महाराज, 6. श्री अमर नाथ जी महाराज 7. श्री प्रेमनाथ जी महाराज।

हिंगवा गद्दी :- दौसा से पूर्व की और सिकराय उपखंड के हिंगवा गांव में नाथ समाज के विभिन्न पंथों में यह सत्य नाथी पंथ की प्रमुख गद्दी है। स्थानीय लोगों के अनुसार यहां कई संत महात्मा रहे हैं जिनमें से करीब 6 महात्माओं ने जीवित समाधि ली और कई तरह के चमत्कारों पर भी लोग विश्वास करते हैं।

इस समय वहाँ रामेश्वर नाथ विराजमान हैं। ऐसा माना जाता है कि, महाभारत के युद्ध से पहले ही पता लग गया था कि यहां युद्ध होने वाला है, तभी वहां से चलकर बाबा थलनाथ महाराज हिंगवा आए थे और यहां उन्होंने अपना एक धूना लगाकर आसन जमाया। ऐसा माना जाता है कि जयपुर के राजा सवाई मानसिंह करीब 1800 वर्ष पहले यहां दर्शन करने आए थे तब उन्होंने इस मंदिर का निर्माण करवाना शुरू किया था। लेकिन मंदिर निर्माण एक बार में पूरा नहीं हुआ कई बार में अलग-अलग भाग में इस मंदिर का वर्तमान स्वरूप बन सका। संत लक्ष्मण नाथ जी के अनुसार, इस गद्दी पर कई महाराज रहे हैं। यहां 58 समाधि स्थल बने हुए हैं। इनमें छह महाराजों ने जीवित रहते ही समाधि ली। इनमें सजान नाथ महाराज ने सबसे पहले समाधि ली थी। इसकी भी किंवदंति है, कहते हैं वो यहां से समाधि लेकर जमीन के अंदर से चलकर सबसे पहले कालवान गांव जाकर निकले। लोगों से पूछा यह कौन सा गांव है? पहाड़ी पर पशु चरा रहे चरवाहों ने बताया यह कालवान गांव है। सजाननाथ महाराज ने दोबारा वहां जमीन के अंदर ही समाधि ले ली और फिर हिंगवा गांव के पहाड़ के पास निकले। यहां आज भी लोग पूजा करते हैं। दौसा के चारों ओर अरावली पर्वत माला है। अरावली के घने जंगल संतों को तपस्या करने के लिए हमेशा आकर्षित करते हैं।

संदर्भ :-

1. मेनारिया डॉ. पुरुषोत्तम लाल, राजस्थानी संत साहित्य, पृ. 66
2. मेनारिया डॉ. पुरुषोत्तम लाल, राजस्थानी संत साहित्य, पृ. 48
3. श्री दुर्बलनाथ, अनुभव आतम प्रकाश, (1986) पृ. 18
4. श्री दुर्बलनाथ, अनुभव आतम प्रकाश, बांदीकुई (1986) पृ. 207
5. श्री दुर्बलनाथ, अनुभव आतम प्रकाश, बांदीकुई (1986) पृ. 321
6. श्री दुर्बलनाथ, अनुभव आतम प्रकाश, बांदीकुई (1986) पृ. 230
7. श्री दुर्बलनाथ, अनुभव आतम प्रकाश, बांदीकुई (1986) पृ. 5

आधुनिक चिंतन और आदिवासी समाज की पहचान

अभिषेक कुमार मीना

शोधार्थी, हिंदी विभाग
हैदराबाद केंद्रीय विश्वविद्यालय

भूमिका -

भूमण्डलीकरण एवं उच्च तकनीकी के इस दौर में आदिवासियों पर चर्चा करना ऐसा लगता है जैसे अतिसभ्य बुद्धि जीवियों के बीच पाषाणयुगीन मानव समूहों के बारे में बात की जा रही है। अतिसभ्य समाज और आदिवासियों के मध्य भौतिक, सांस्कृतिक एवं वैचारिक स्तर पर कई-कई युगों का जो अन्तराल दिखाई देता है उसी के कारण अतिसभ्य एवं आदिम सरोकार किसी भी भाषा में आपस में संवाद करने की स्थिति में नहीं है। हरिराम मीणा के शब्दों में "इस अन्तराल से परे आदिम समाजों की अस्मिता के सवाल को जब इस उत्तर-आधुनिक एवं वैश्विक दौर में समझने का प्रयास किया जायेगा तो एक छोर पर वह आदिम समाज है जिन्हें हम आदिवासी के नाम से जानते हैं, ये लोग अभी भी जीवन के प्रति आदिम दृष्टिकोण अपनाये हुए हैं। दूसरी ओर मुख्य राष्ट्र-समाज का विकसित एवं उच्च तकनीक से सम्पन्न वह वर्ग सामने आता है जो राष्ट्र- समाजों की सीमाओं को भी तोड़ता हुआ वैश्विक अग्रणी वर्ग का प्रतिनिधित्व करता है।"¹

आदिवासी अस्मिता का विश्लेषण करने के लिए 'आदिवासी' शब्द की व्याख्या के साथ-साथ आदिवासी जन समुदायों की पहचान भी अनिवार्य है। भारतीय समाज का अलग-थलग पड़ा यह हिस्सा अपनी संस्कृति को अनोखी मान्यताओं, परम्पराओं एवं संस्कारों से आज भी जीवित रखे हुए हैं। पूरे देश के विभिन्न अंचलों में आदिवासी जन समुदाय बिखरे पड़े हैं जिनमें से अधिकांश का परस्पर कोई सम्पर्क नहीं है। इन समुदायों की सांस्कृतिक जीवनशैली में कमावेश अन्तर दिखाई देता है फिर भी इनका समेकीकृत स्वरूप आदिवासी जन की एक छवि को इंगित करता है। हरिराम मीणा के शब्दों में 'यह छवि ही आदिवासी की पहचान है और इस पहचान को मानव समाज के रूप में सम्मान देना ही आदिवासी अस्मिता कही जा सकती है।'

आदिवासी शब्द 'आदि' और 'वासी' इन दो शब्दों से मिलकर बना है। आदि अर्थात् जो सबसे पहले से है और 'वासी' अर्थात् निवासी। गंगासहाय मीणा ने 'आदिवासी' शब्द को परिभाषित करते हुए लिखा है- "'आदिवासी' देश के मूल निवासी माने जाने वाले तमाम आदिम समुदायों का सामूहिक नाम है।"²

'आदिवासी' पद में 'आदि' इन जन-समुदायों के आदिम होने का बोध कराता है। आदिवासी शब्द एक पहचान को चिन्हित करता है। यह पहचान उनकी अस्मिता से जुड़ी हुई है। इस तरह भारतीय समाज में आदिवासी उन समूह एवं समुदायों के लिए प्रयुक्त होता है जो अपनी समान जीवन स्थितियां एवं दुःख-दर्द के साथ रह रहे हैं एवं जिनमें मूल मानवता का स्वर सुनाई देता है। भारत में आदिवासियों का इतिहास संघर्ष का इतिहास रहा है। सदियों पहले आदिवासियों को सभ्यता से बहिष्कृत कर जंगलों में धकेल दिया गया। इन जन-समुदायों ने जंगलों में रहते हुए अपनी संस्कृति की विरासत कायम रखी और पूरे आत्म-सम्मान के साथ जीते रहे। इसी संदर्भ में रमणिका गुप्ता ने लिखा है- "एक पराजित समूह होते हुए भी आदिवासियों ने अपनी संस्कृति, भाषा, अपने जीने की सामूहिक शैली, परम्पराओं और रीति-रिवाजों की विरासत को जिंदा रखा है।"³